© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 5 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

प्रतापविजयम् नाटक की नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से समीक्षा

पूजा जायसवाल
नेट/जेआरएफ
शोधच्छात्रा
संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

संस्कृत साहित्य के इतिहास में बीसवीं शती का समय एक अभूतपूर्व परिवर्तन का समय माना जाता है जिससे संस्कृत नाट्य साहित्य भी अछूता न रहा। वैदिक साहित्य की समीक्षा से भी ज्ञात होता है कि वैदिक काल में नाटक के सभी अंगों–संवाद, संगीत, नृत्य एवं अभिनय का किसी न किसी रूप में अस्तित्व विद्यमान था। ऋग्वेद के यम–यमी, पुरूरवा–उर्वशी एवं सरमा–पणि के संवादात्मक सूक्तों में नाटकीय संवाद का तत्त्व विद्यमान था। बीसवीं शती के पूर्वकालीन कवियों ने प्रायः रामायण, महाभारत आदि प्राचीन ग्रन्थों से कथावस्तु को लेकर काव्य नाटक आदि की सर्जना की।

'नाट्यशास्त्र' तथा भाव प्रकाशन में नाट्य के प्राचीनत्व का विशद विवेचन पाया जाता है। संस्कृत साहित्य के इतिहास का अध्ययन करने से यह भी ज्ञात होता है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति काल में ऐतिहासिक नाटकों का विशेष योगदान रहा।

बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध के समय जहाँ राष्ट्र नेता अपने भारत देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए प्राणाहुति देने के लिए तत्पर रहते थे, वहीं कविगण अपनी लेखनी के माध्यम से भारतीय जनमानस में प्रेरणा का स्रोत भर रहे थे। इसी काल में संस्कृत भाषा में अनेक नाटकों का सर्जन किया गया, जो किसी न किसी रूप में राष्ट्रहित की भावना को जागरित करते हैं।

उसी श्रृला में श्री मूलशंकर माणिकलाल याज्ञिक नें भी 'प्रतापविजयम्' नामक नाटक की रचना की।

बीसवीं शताब्दी में संस्कृत–साहित्यकाश में अनेक नक्षत्रों का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होंने अपनी लेखनी के प्रकाश में सम्पूर्ण भारत को अलोकित कर परतन्त्रता के अन्धकार से मुक्ति प्रदान किया। ऐसे नक्षत्रों में श्री मूलशंकर याज्ञिक का नाम अग्रगण्य है। भारतीय साहित्य की यह विडम्बना रही है कि अनेक मूर्धन्य लेखकों एवं कवियों की भाँति श्री याज्ञिक के जीवन सन्दर्भ के विषय में भी हमें विस्तृत परिचय नहीं प्राप्त होता है।

नाट्य कृतियाँ– श्री याज्ञिक की संस्कृत–नाट्य कृतियाँ बड़ौदा में स्थित संस्कृत महाविद्यालय के आचार्यत्व काल में ही प्रकाशित हो गयी थी।

संस्कृत भाषा में, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित याज्ञिक के तीन प्रमुख नाटक हैं जो इस प्रकार हैं–

1. संयोगिता स्वयंवरम्
2. छत्रपति साम्राज्यम्
3. प्रतापविजयम्

'प्रतापविजयम्' नाटक महाराणा प्रताप सिंह की गौरव गाथा है। यह वीर रस प्रधान नाटक है। इस नाटक की कथावस्तु मेवाड़ केशरी राणा प्रताप सिंह एवं मुगलबादशाह अकबर के बीच हुये प्रसिद्ध हल्दीघाटी युद्ध पर आधारित है। इस नाटक के माध्यम से नाटककार ने तत्कालीन आंग्लशासक के प्रति विद्रोह की भावना को व्यक्त किया है तथा भारतीय जनता को संघर्ष करने की प्रेरणा दी। सशक्त कथावस्तु वाले इस नाटक के प्रमुख पात्र महाराणा प्रतापसिंह, मुगल सम्राट अकबर, मानसिंह, भीमाशा झालामान सिंह आदि हैं। प्रतापविजयम् नामक ऐतिहासिक नाटक में नौ अंक हैं।

नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से समीक्षा–

दशरूपक के अनुसार वस्तु, नेता तथा रस रूपक के तीन प्रमुख तत्त्व होते हैं। प्रतापविजयम् की कथावस्तु भारत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित है, वस्तु के गठन में कवि ने अपनी मौलिक प्रतिभा, विद्वता का परिचय दिया है जो श्लाघनीय है। इस नाटक की कथा में अर्थ प्रकृतियाँ, अर्थोपक्षेपक, सन्धियाँ, कार्यावस्थायें आदि का यथापेक्षित यथास्थान कवि नें वर्णन किया है। 'प्रतापविजयम्' नाटक के प्रधान नायक महाराणा प्रतापसिंह उदात्त श्रेणी के नायक हैं। दशरूपक के अनुसार उदात्त नायक का लक्षण इस प्रकार बताया गया है।

लक्षण– महासत्त्वोऽतिगम्भीरः क्षमावानविकत्थनः।
स्थिरो निगूढ़ाहारों धीरोदात्तों दृढ़व्रतः।।[1]

उपर्युक्त कारिका में कहे गये समस्त लक्षण महाराणा प्रताप सिंह में विद्यमान हैं।

'प्रतापविजयम्' नाटक की नायिका महाराणाप्रताप की पत्नी है किन्तु उनका अत्यल्प वर्णन इस नाटक में हुआ है। वह एक राजमहिषी हैं किन्तु उनका नामोल्लेख सम्पूर्ण कथानक में उल्लिखित नहीं हैं। नायिका के विषय में प्राप्त अंशों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वो एक पतिव्रता सहनशील स्वतन्त्रता की अनन्य उपासिका, पति के अभीष्ट सिद्धि हेतु सचेष्ट नारी थी। अन्य अनेक पात्रों का जैसे– खलनायक के रूप में अकबर का आमात्य मंत्री, प्रधानमंत्री, सेनापति आदि का चित्रण नाटक में प्राप्त होता है।

रस योजना–

काव्य या नाटक में रस का अति महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। 'प्रतापविजयम्' वीररस प्रधान नाटक है, जिनका अद्यन्त विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

यह स्वाभाविक रूप में नाटक का प्राण है। वीररस, दानवीर, युद्धवीर, दयावीर एवं धर्मवीर के भेद से चार प्रकार का होता है। 'प्रतापविजयम्' नाटक में वीररस के उपर्युक्त चारों भेदों की यथास्थान व्यंजना प्राप्त होती है। नाटक के प्रारम्भ में ही नाटककार नें जो नान्दी पाठ प्रस्तुत किया है, उसमें भी अ ी रस वीर वर्णित है। 'प्रतापविजयम्' नाटक के प्रथम अंक के इक्कीसवें श्लोक में वीररस का उदाहरण दृष्टव्य है–

प्राप्नोतु राष्ट्रं त्वचिराद्विनाशं, कुलं समग्रं लयमेतु सद्य।
सहस्रधाशु प्रविदीर्यतां वपुः, स्वातन्यमेकं शरणं परं मे।।[2]

वीररस की प्रधानता के कारण सम्पूर्ण नाटक में सात्त्वती वृत्ती की प्रधानता है, स्थान–स्थान पर पात्रों के सत्त्व–शौर्य त्याग आदि का संस्तव वर्णित है।

अलंकार योजना–

---

[1] दशरूपक पृष्ठ–116
[2] प्रतापविजयम् 1/21

अलंकार प्रयोग में याज्ञिक सिद्ध हस्त कवि हैं, उन्होंने वर्ण्य विषयानुसार शब्दालंकार एवं अर्थालंकार दोनों का प्रयोग किया है। 'प्रतापविजयम्' में अर्थान्तरन्यास उपमा, दृष्टान्त, काव्यलि, उत्प्रेक्षा, अप्रस्तुतप्रशंसा, निदर्शना आदि अलंकारों का बहुतायत प्रयोग हुआ है, कहीं–कहीं अनुप्रास, रूपक, अतिशयोक्ति की भी झलक दिखाई पड़ती है। जैसे– 'प्रतापविजयम्' नाटक के चतुर्थ अंक में उपमा अलंकार का उदाहरण दृष्टव्य है–

समरन् पमभीक्ष्णं घर्षयित्वारणाग्रे, प्रकटितपृथुवीर्यो यावनेशाभियुक्तः।
यदुपतिरिव दुर्गे वासयित्वा स्वपौरान्, प्रतिहतपरमन्त्रो राजसे त्वं स्वतन्त्रः।।[3]

छन्द योजना– श्री मूलशंकर याज्ञिक ने शिखरिणी, वंशस्थ, इन्द्रवज्रा, वियोगिनी, द्रुतविलम्बित, रथोद्धता आदि छन्दो का प्रयोग अपनी नाट्य कृति में किया है। वस्तुतः याज्ञिक का प्रकृति–चित्रण एवं बिम्ब–विधान भी अनेक छन्दो के माध्यम से पर्याप्त मात्रा में प्रस्फुटित होता है। इन छन्दों में अलंकारों की छटा दर्शनीय है।

कठोर भावों के प्रसंग में याज्ञिक ने सबसे अधिक शार्दूलविक्रीडित छन्द को चुना है और उसको पूरी तरह घटित किया है। यह नाटक छन्दों की दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध है।

'प्रतापविजयम्' में गुणत्रय का वर्णन भी यथा स्थान किया गया है। वीररस प्रधान इस ऐतिहासिक नाटक में ओज गुण की प्रधानता है, माधुर्य और प्रसाद का भी यत्र–तत्र प्रसंगताः वर्णन किया गया है। गुण रस के नित्य एवं उत्कर्षाधायक तत्त्व होते हैं।

निष्कर्षतः अन्त में यह कह सकते हैं कि संस्कृत–साहित्य के इतिहास में राष्ट्रीयता से परिपूर्ण नाटकों में श्री याज्ञिक के नाटकों का प्रमुख स्थान है। श्री याज्ञिक ने देशप्रेम के पक्षधर पात्रों एवं अन्यान्य पात्रों का चित्रण बहुत ही सुन्दर ढंग से किया है। उन्होंने इस कृति के माध्यम से समाज में देश के प्रति जागृति लाने एवं राष्ट्र के प्रति जागरूकता लाने का कार्य किया है। राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य राष्ट्र को पराधीनता के बन्धन से मुक्त कराना है। श्री याज्ञिक द्वारा संस्कृत साहित्य के इतिहास में चित्रित राष्ट्रीयता का यह बीज पश्चात्वर्ती समय में और अधिक पल्लवित एवं विकसित हुआ। याज्ञिक ने प्रताप सिंह एवं उनके सहयोगियों के माध्यम से मेवाड़ राज्य के प्रति राष्ट्रीय रतिभाव को प्रदर्शित किया है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1. 'प्रतापविजयम्' नाटक, श्री मूलशर माणिक लाल याज्ञिक, 1931
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी 2001 दशम् संस्करण।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, उपाध्याय, गंगा प्रसाद, वाराणसी 1953
4. दशरूपक, श्री धनजयविरचितं, रतिरामशास्त्री साहित्य भण्डार मेरठ प्रथम संस्करण वाराणसी 1969
5. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, उपाध्याय, गंगा प्रसाद 1973
6. प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका, उपाध्याय, रामजी इलाहाबाद 1966
7. विंश शताब्दी संस्कृतकाव्यामृतम, संपा0 डॉ0 राजेन्द्र मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद.
8. संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी, प्रथम संस्करण – 2009

[3] प्रतापविजयम्–4 / 11